कहानी और फ़िल्मों की जुगलबन्दी से मानवीय मूल्यों को सींचना

सन्दर्भ : 13 नवम्बर – विश्व दयालुता दिवस

मंजु श्रीमाली

लिखना अपेक्षाकृत जटिल कौशल है। स्वतंत्र और मौलिक लेखन तो और भी कठिन है। अव्वल तो इसके मौक़े ही कम होते हैं, फिर सोचने-विचारने और अपनी अभिव्यक्ति को रख पाने के लिए जो अनुकूलता और अवसर चाहिए वो स्कूलों में मिलता ही नहीं। परिणामतः बच्चे लिख पाने में बहुत सहज नहीं होते हैं। इसके अलावा, वर्तनी की अशुद्धियों पर शिक्षक की टिप्पणी और वाक्यविन्यास में कमी निकालने जैसी बातें बच्चों को लगातार हतोत्साहित करती हैं। मंजु श्रीमाली ने अपने इस आलेख में दयालुता विषय पर बच्चों के लेखन से जुड़ी हुई बारीक़ियों को रखने की कोशिश की है। साथ ही दयालुता विषय पर संवेदना और दृष्टि बनाने के लिए किए गए प्रयास पर भी टिपण्णी की है। सं.

पूरा हॉल भीड़ से खचाखच भरा था। हर कोई दीवारों पर लगे चार्ट, पोस्टर, कोलाज आदि देख रहा था। बच्चों में संवैधानिक-मानवीय मूल्यों का विकास हो, यह ध्येय लेकर हम 'विद्या भवन स्वराज एवं गांधी शान्ति केन्द्र' के तहत 13 नवम्बर, 2021 को विश्व दयालुता दिवस पर बच्चों के साथ कहानी लेखन, कविता लेखन, कोलाज, पोस्टर आदि गतिविधियाँ करवा रहे थे।

इस लेख में, मैंने इस कार्यक्रम की तैयारी के कुछ अनुभवों को रखा है।

जब बच्चों से कार्यक्रम में होने वाली विभिन्न गतिविधियों के लिए अपने नाम देने के लिए कहा गया तो ज़्यादातर बच्चों ने कोलाज एवं पोस्टर गतिविधि में नाम लिखवाया था। ये इस बात की तरफ़ सीधा इशारा था कि बच्चों के लिए कहानी एवं कविता लिखने वाली गतिविधि कठिन थी। मेरे लिए बच्चों को ख़ुद की कहानियाँ अथवा कविताएँ लिखने हेतु प्रेरित करना बहुत मुश्किल था। लगभग पन्द्रह दिनों तक मैं उनसे बात करती रही कि कैसे कहानी की शुरुआत होती है और उसे रोचक कैसे बनाया जा सकता है। इसके लिए कभी-कभी बच्चों को ख़ुद की लिखी कहानियाँ भी सुनाईं।

अन्ततः बच्चों ने कहानियाँ लिखीं। कुछ ने गूगल से कॉपी किया था तो उन बच्चों की कहानियाँ हूबहू एक-सी थीं, लेकिन इसमें उनकी कोई ग़लती नहीं थी। दरअसल, गूगल को कहाँ पता था कि एक ही गतिविधि के लिए अलग-अलग बच्चों द्वारा उसपर कहानियाँ खोजी जा रही हैं। उसने तो 'दयालुता पर कहानियाँ' सर्च करने पर हर बच्चे को वही रिजल्ट्स निकालकर दिए और बच्चों ने भी पहले ही रिजल्ट को कॉपी कर दिया। ख़ैर, उनके द्वारा नक़ल की गई एक जैसी कहानियों को भी मैंने प्रदर्शनी के लिए चुना था।

कुछ मूल कहानियाँ भी थीं। जो बच्चों ने अपने अनुभवों के आधार पर लिखी थीं। मसलन, कक्षा 7 के पूरण ने 'बिल्ली' पर एक कहानी लिखी थी। पूरण लिखता है, "मेरे घर की छत

पर रोज़ एक बिल्ली आती थी। मैं उसे दूध पिलाता था। एक दिन उस बिल्ली ने एक बच्चे को जन्म दिया और मर गई। मैं उस बच्चे को अपने घर ले आया और दूध पिलाने लगा। अब वह बच्चा बड़ा हो गया है और मैं उसका ख़ूब ध्यान रखता हूँ।"

कहानी बहुत छोटी थी, लेकिन सच्ची प्रतीत हो रही थी। जब पूरण से बात हुई तो उसने बताया कि ये बिलकुल सच्ची घटना थी।

चित्र : प्रशांत सोनी

अन्य कहानियों को भी मुझे पढ़ना था और एक के बाद एक बच्चों द्वारा लिखी कहानियाँ पढ़ते हुए जहाँ एक तरफ़ मुझे अजीब आनन्द की अनुभूति हो रही थी, वहीं छोटे-छोटे बच्चों की उन कहानियों में व्याप्त शब्दों एवं वाक्यों की अशुद्धियाँ पठन को और अधिक चुनौतीपूर्ण एवं रुचिकर बना रही थीं। इन्हें ठीक करना मैंने इसलिए उचित नहीं समझा, क्यूँकि ऐसा करना कहीं-न-कहीं उनके अभी-अभी उत्पन्न हुए लेखन के साहस को ख़त्म करना होता। मैं जानती थी कि समय के साथ वे ग़लत लिखे हुए शब्दों और वाक्यों को ख़ुद ही ठीक कर लेंगे। ये ग़लतियाँ उन्हें उनके जीवन से जोड़ेंगी, विचार देंगी और वास्तव में यही उन्हें सबसे ज़्यादा सिखाएँगी। एक इंसान और विशेषकर एक शिक्षक के रूप में हम हर बार यही ग़लती कर बैठते हैं, और बजाय भावों को समझने का प्रयास करके हमेशा शब्दों एवं वाक्यों की अशुद्धियों पर ग़ौर कर लेते हैं। लेकिन मैंने वह ग़लती नहीं की। मैंने प्रत्येक बच्चे की कहानी में बिखरे उसके भाव को सराहा। मुझे तसल्ली हुई कि इस प्रकार हम बच्चों के विचारों को जानने, उन्हें संवेदनशील बनाने और उद्वेलित करने का प्रयास कर रहे थे। एक और चीज़ जो वहाँ देखी जा सकती थी वो उम्र के अनुसार उनका लेखन था। छठी कक्षा के बच्चे के लेखन में नौवीं के बच्चे से कम परिपक्वता एवं शब्दों की कमी तो दिख रही थी। लेकिन अगर आप ये समझते हैं कि ऐसा होना लाज़िमी है तो आप छठी कक्षा के बच्चे के लेखन में भी भाव ढूँढ़ सकते हैं।

इसी वर्ष विद्यालय में दाख़िला लेने वाली कक्षा 11 की ख़ुशबू, ख़ुद को बहुत उत्साहित महसूस कर रही थी। उसने एक के बाद एक चार कहानियाँ लिखीं और मुझे पढ़वाईं। उसकी सबसे पहली कहानी बहुत उपदेशात्मक थी। मैंने उसे कहानी को उपदेश की बजाय घटनाओं से जोड़कर आगे बढ़ाने व थोड़ा और रोचक बनाने को कहा। उसने कहानी में सुधार किया। उसने लिंगभेद, धार्मिक सहिष्णुता एवं मानवता से जुड़ी अलग-अलग कहानियाँ लिखीं।

ख़ुशबू की पहली कहानी भी किसी ग़रीब की मदद करने पर थी, और ऐसे कई बच्चे थे जो समझते थे कि दया का मतलब बस दूसरों को कुछ देना या उनकी मदद करना होता है। अतः मुझे लगा कि बच्चों के साथ दया अथवा दयालुता के विस्तृत अर्थ पर बातचीत की जाए। यह बातचीत दयालुता के बारे में कैसे की जाए ताकि उनका हृदय सहज रूप से इसे आत्मसात

कर पाए और उनके लेखन में भी मौलिकता व गहराई आए।

एक तरीक़ा जो हमने बच्चों को दयालुता का अर्थ समझने हेतु अपनाया, वो था फ़िल्म स्क्रीनिंग का। हमने एक के बाद एक चार फ़िल्में क्रमशः *रोड टू रिफॉर्म* (समाज में क़ैदियों के पुनर्स्थापन को लेकर बनी फ़िल्म), *घर की मुर्ग़ी* (गृहिणियों के कार्य को सम्मान देने सम्बन्धी विषय पर आधारित), *लड्डू* (धार्मिक सहिष्णुता पर आधारित) एवं *पेंसिल बॉक्स* (ट्रांसजेंडर समुदाय को समाज में समानता का दर्जा देने का सन्देश देती फ़िल्म) दिखाईं। फ़िल्में देखने के बाद विद्यार्थियों एवं स्टाफ सदस्यों से फ़ीडबैक लिया गया।

काफ़ी देर तक हिचकिचाने के बाद कक्षा 10 के ऋषभ ने कहा, "*लड्डू* फ़िल्म में हमें ये बताया गया है कि हमें हिन्दू-मुसलमान के नाम पर नहीं लड़ना चाहिए। वास्तव में, हमारे बस धर्म अलग हैं, हैं तो हम सभी इंसान ही।" कक्षा 9 की उर्मिला कहती है, "हमें अपनी मम्मी के काम के महत्त्व को समझना चाहिए, वो हमारे लिए कितना काम करती हैं!" कक्षा 11 के निखिल ने कहा, "एक माँ हमारे लिए जो करती है, कोई नहीं कर सकता।" कक्षा 9 की नीतू ने भी सभी धर्मों का सम्मान करने की बात कही।

स्टाफ सदस्यों ने भी फ़िल्मों के चयन को सराहा एवं उन्हें पसन्द किया। एक स्टाफ सदस्य ने *घर की मुर्ग़ी* फ़िल्म से प्रेरणा लेते हुए कहा, "मैंने अपनी पत्नी के काम को कभी महत्त्व नहीं दिया। मुझे लगता था कि वास्तव में कमाता तो मैं ही हूँ, ये तो घर ही रहती हैं, लेकिन आज एहसास हुआ कि मैं कितना ग़लत था और आज से पहले ये मैंने कभी नहीं सोचा!" उन्होंने अपनी पत्नी को कहीं घुमाने ले जाने की बात भी कही। केवल एक बात जिसने मुझे परेशान किया वो यह थी कि ट्रांसजेंडर समुदाय के प्रति होने वाले भेदभाव की तरफ़ इशारा करती फ़िल्म *पेंसिल बॉक्स* पर कमेंट्स नहीं आए, जो दिखाता है कि इस मुद्दे पर हमारे आसपास कितनी असंवेदनशीलता व्याप्त है। अपने स्टाफ सदस्यों के साथ बैठे हुए मैंने ही इस मुद्दे को छेड़ा, तब एक ने कहा कि वाक़ई ट्रांसजेंडर समुदाय को एलियन की भाँति समझा जाता है, उनपर हँसा जाता है और उन्हें हमारी भाँति सामान्य जीवन जीते नहीं देखा जाता है। उन्होंने अपने पड़ोस में रहने वाले एक बच्चे के ट्रांसजेंडर होने की बात बताई जिसने सब तरफ़ पता चल जाने पर घर छोड़ दिया था।

जिस दिन प्रदर्शनी लगी, मैं ख़ुश थी कि सहानुभूति, प्रेम, सहयोग, समानता, अहिंसा

चित्र : प्रशांत सोनी

आदि को अपनाने व दयालु बनने का हमारा सन्देश बच्चों तक पहुँचा था। ये सन्देश बच्चों तक पहुँचना ज़रूरी था और इन मूल्यों का विकास उनमें हो यही तो अपेक्षा है हमारे संवैधानिक मूल्यों की। तो ख़ुश थी ही। मैंने देखा, बच्चे भी काफ़ी ख़ुश थे। जब वे अपनी कक्षा के बच्चों के साथ पंक्ति में घूमकर अपने द्वारा लिखी गई कहानियों को अपने दोस्तों

को बता रहे थे, तब उनकी आँखों की चमक देखने लायक़ थी। वे ख़ुद को औरों से कुछ साहसी एवं बेहतर समझ रहे थे। मुझे लगा कि यह भावना भविष्य में उन्हें इस तरह की गतिविधियों में भाग लेने एवं ख़ुद से लिखने के लिए सम्बल प्रदान करेगी।

मंजु श्रीमाली ने अँग्रेज़ी व इतिहास में स्नातकोत्तर किया है, उन्होंने बीएड की पढ़ाई भी की है। वर्तमान में विद्या भवन बुनियादी उच्च माध्यमिक विद्यालय, रामगिरि, उदयपुर में अँग्रेज़ी की अध्यापिका हैं। पढ़ाने के साथ-साथ विद्यालय में बच्चों के साथ सांस्कृतिक एवं साहित्यिक गतिविधियाँ आयोजित करती हैं। लेखन में विशेष रुचि है, और इसे अपने कार्य से जोड़ते हुए हिन्दी में कहानियाँ, नाटक एवं कविताएँ लिखकर विद्यालय के कार्यक्रमों में बच्चों के माध्यम से प्रस्तुत करती रहती हैं।

सम्पर्क : manjushri5633@gmail.com